'चल निकली छवि' से बाहर आयी मीरां

मलय पानेरी

मीरां के जीवन और समाज से संबंधित पुस्तक *पचरंग चोला पहन सखी री* के लेखक माधव हाड़ा ने मीरां को उसकी प्रचलित छवि से इतर रूप मे पाठक-सम्मुख रखा है। वास्तव में हम देखें कि त्रासद और दुखद घटनाओं से संबंध रखने वाली मीरां ही सामान्य जन एवं पाठक को याद है। छोटी कक्षाओं के पाठ्यक्रम में भी सामंती अत्याचारों से पीड़ित नारी के रूप में मीरां को चित्रित किया जाता रहा है और दूसरी छवि मीरां की तत्कालीन सामंती अत्याचारों और शोषण के विरुद्ध लड़ने वाली स्त्री की रही है परन्तु एक स्त्री के विरोध की दुर्गति के रूप में मीरां पुरुष की वर्चस्ववादी, अहंकारी, शोषण-वृत्ति को चित्रित करती है। यह सही है कि मीरां के जीवन के संबंध में प्रामाणिक जानकारियाँ कम मिलती हैं, शायद इसीलिए इतिहासकारों एवं साहित्यकारों में मीरां-जीवन को लेकर कुछ मतान्तर रहे हैं। उन्हीं मतान्तरों की वजह से मीरां की भिन्न-भिन्न छवियाँ हमारे सामने आती रही हैं। लोक और भक्तों द्वारा गढ़ी गयी मीरां का संभावित असल रूप क्या हो सकता है, इसे विशेष ध्यान में रखते हुए माधव हाड़ा ने इस पुस्तक की गहन शोध-रुचि से रचना की है।

पुस्तक छह अध्यायों में विभाजित है जो क्रमशः इस प्रकार हैं - जीवन, समाज, धर्माख्यान, कविता, कैननाइजेशन और छवि निर्माण। उक्त क्रमान्तर्गत लेखक ने मीरां को उसकी संपूर्णता में व्याख्यायित किया है। मीरां के संदर्भ में भ्रमपूर्ण जानकारियाँ अधिक रही है तो उसका भी कारण रहा है कि एक तो प्रामाणिक सूचनाओं का अभाव, दूसरा इतिहासकारों द्वारा उस समय प्रचलित नारी की स्थिति से बाहर विद्रोह को न स्वीकारना और स्त्रियों को परंपरागत छवि में ही रखकर संतोष की अनुभूति करना। ऐसी विवश स्थितियों में किसी व्यवस्था-विद्रोही स्त्री को पूज्य बनाने का साहस संभव नहीं था। लेखक ने इस पुस्तक में उल्लेख भी किया है कि मीरां का समाज और समय ठंडा और ठहरा हुआ था, इसी ठहरे हुए समाज के विरुद्ध मीरां ने विद्रोह किया। मीरां ने यह साहसी कदम उठाया था परंतु इसे हम एक अजीब प्रकार का ठंडापन ही कहेंगे कि आगे मीरां का यह स्वर अनुगूँज की स्थिति नहीं बना पाया। इस पुस्तक के 'जीवन' अध्याय में लेखक ने स्पष्ट किया भी है कि "मीरां किसी सत्तारूढ़ की बेटी और पत्नी नहीं थी इसीलिए मेवाड़ से संबंधित इतिहास के पारंपरिक ख्यात, बही आदि रूपों में उसका उल्लेख नही के बराबर है।" साथ ही यह भी उल्लेख किया है कि "मारवाड़ के राणीमंगा भाट केहरदान और दाऊदान के बही में उसका नामोल्लेख मिलता है।" इससे एक बात तो साफ हो जाती है कि मेवाड़ की जिन ख्यातों और बहियों में मीरां का उल्लेख 'नहीं के बराबर' है वे जान-बूझकर हैं। या फिर मारवाड़ और मेवाड़ याने पीहर और ससुराल में स्त्री-दशा का अन्तर दर्शाता है। यह बात मुख्य न होते हुए भी तत्कालीन स्त्रियों के संदर्भ में चिंतन-बाह्य नहीं हो सकती है।

इतिहास के तर्कपूर्ण जानकारियों के अभाव में हम किसी भी शासनकाल में रचे गए साहित्य का सही मूल्यांकन-विवेचन नहीं कर सकते हैं, क्योंकि काल-विशेष में लिखी गई रचनाओं में उस समय की स्थितियों की विशेष भूमिका निश्चित रहती है। लेखक ने इस दृष्टि से उस पृष्ठभूमि का तार्किक एवं प्रामाणिक आधार मजबूत करने के लिए तत्कालीन इतिहासकारों के इतिहास-लेखन की वस्तुस्थिति से पाठकों को अवगत कराने का सफल श्रम किया है। कर्नल जेम्स टॉड ने राजस्थान के इतिहास ग्रन्थ एनल्स एंड एंटीक्विटीज़ ऑफ राजस्थान में जो जानकारियाँ दी हैं वे वास्तव में स्रोतों के अभाव में अधूरी हैं तो दूसरी कमी यह भी कि उपनिवेशकाल इतिहासकार अपने देशीय संस्कार एवं रुचियों के प्रभाव से वे मुक्त नहीं थे। इसलिए लेखक का यह कहना संगत लगता है कि मीरां की संत-भक्त छवि गढ़ी गई और बाद में इतिहास एवं साहित्य में उसकी यही छवि बन गई। इस बनायी गई छवि से ही लोक परिचित हो पाया क्योंकि पारंपरिक इतिहास रूपों में मीरां का कहीं समावेश नहीं था, फिर भी धार्मिक चरित्राख्यानों में मीरां की कमोबेश मौजूदगी भक्तिकालीन साहित्य की पृष्ठभूमि की वजह से थीं। वैसे भी देखा जाए तो भक्ति-आंदोलन लोकोन्मुख सामाजिक आंदोलन भी था, इसीलिए भक्ति के प्रचार-प्रसार का संबंध इस्लाम मतावलंबी आक्रामकों द्वारा हिन्दू राजाओं की पराजय से जोड़ा था - इसके पीछे मंशा शायद हिन्दू जनता की निराश और असहायता दर्शाने की रही थीं। जब हम 'भक्तमाल', 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' से अवगत होते हैं तो यह भी पता चलता है कि इस लोकोन्मुख सामाजिक आन्दोलन में स्त्री, पुरुष, सवर्ण, अवर्ण, हिन्दू-मुसलमान सब शामिल थे। इतनी साधारण परिस्थितियों के बावजूद विशेष प्रकार की घटनात्मक स्थितियों ने मीरां का जीवन बाधापूर्ण कर दिया। यह सही है कि मीरां इन सबके बावजूद भक्तिकाल की सर्वाधिक प्रसिद्ध कवयित्री रही हैं। उनकी कविता में स्त्री-मन की सरल, प्रांजल एवं निष्छल अभिव्यक्ति की तीव्रता अनुपम है तो उसका एक मात्र कारण है कि भक्त कवि किसी सामन्त या सम्राट के अधीन एवं आश्रित नहीं रहे हैं। वे लोक-बीच रहते हुए लोकोन्मुख काव्य-रचना करते थे, इसीलिए उनकी रचनाओं में आश्रयदाताओं की रुचि का कहीं अनुसरण नहीं है। विशेष रूप से मीरां की कविता में हम देखते हैं कि वह भक्तिकाल में भक्ति के प्रचलित स्वरूप के विरुद्ध रही इसीलिए धर्म को भावना विषय नहीं होने दिया। मीरां की कविता पारिपाटिबद्ध नहीं थी, क्योंकि उसमें तत्कालीन समाज की रुग्ण रीतियों एवं परंपराओं का विरोध होना था। फिर मीरां का विद्रोही बनना स्वभावगत नहीं वरन् विषम परिस्थितिगत था। यह सही है कि मीरांकालीन समाज में विधवा स्त्रियों की भूमिका सीमित होते हुए भी वे एकदम उपेक्षित एवं अरक्षित नहीं थी, किंतु समाज में स्थान भी बहुत मानप्रद नहीं था। तिरस्कार और प्रताड़ना तो सधवा स्त्री-जीवन में भी मौजूद थे - मीरां भी इनसे मुक्त नहीं थीं। हाड़ा के इस मत से साधारण पाठक सहमत होकर अपना ज्ञान-संवर्द्धन ही करेगा कि "मीरां के समय में स्त्रियों को जीवन की पूर्ण स्वतंत्रता तो किसी भी समाज में नहीं थीं, लेकिन यहाँ का समाज कुछ इस तरह का था इसमें स्त्रियों के कुछ हद तक अपने ढंग से जीवन यापन के अवसर थे। इस समाज में स्त्रियों के साहस और स्वेच्छाचार को भी मान्यता थी।"

लेकिन मीरां के लिए स्वेच्छाचार की अपेक्षा साहस अधिक मान्य हो गया उसका भी कारण यह रहा कि बदली पारिवारिक जीवन स्थितियों ने मीरां का चरित्र ही बदल दिया। मीरां का यह क्रांति-चरित्र बचपन के संस्कारों से और अधिक प्रबल हुआ होगा। कृति-लेखक माधव हाड़ा ने संकेत भी किया है - "मीरां का दादा दूदा अपने समय का विख्यात योद्धा और कूटनीतिज्ञ था। उसने मीरां को इस तरह पाला-पोसा होगा कि वह वह एक आत्मनिर्भर और स्वावलंबी स्त्री के रूप में मेवाड़ और मारवाड़-मेड़ता के तत्कालीन कूटनीतिक और सामाजिक ताने बाने में आसानी से समायोजित हो सके।" फिर भी मीरां अपनी सुरक्षा और स्थायित्व के लिए भटकती रही, कई जगहों पर गई भी और स्त्री होने के नाते कई प्रकार के प्रतिरोध का साहसपूर्वक सामना भी किया। उसका यह प्रतिरोध स्वीकार्य हुआ लेकिन इसका यह मतलब कतई नहीं है कि उसे स्त्री-मुक्ति के संदर्भ से जोड़े। मुहता नैणसी री ख्यात (भाग-1) के आधार पर लेखक ने लिखा है कि विश्वाससघात, दुराचरण एवं पति की नाराजगी की स्थिति में पत्नी की पदावनति का भी चलन था जो महलों से नीचे उतारने के रूप में था - इस प्रसंग में लेखक की यह मान्यता असंदिग्ध है कि परंपरा-विरुद्ध आचरण के लिए मीरां के साथ भी ऐसा हुआ होगा। अन्तःपुर के कड़े प्रावधानों के बावजूद स्त्री-रक्षा की चिंता थी इसीलिए अलक्जेंडर किनलॉक फार्ब्स के उस मत का यहाँ लेखक ने खण्डन किया है कि हिन्दू स्त्रियों को यहाँ के पुरूषों से अपेक्षित मान नहीं मिलता हैं। जब कि आम पाठक एवं साहित्य के रुचिशील पाठक भी शायद ही जान पाए हों कि कर्नल जेम्स टॉड ने क्षत्रिय जातीय समूहों में स्त्रियों के सम्मान की प्रशंसा भी की है। इस हेतु प्रमाण के रूप में ऐतिहासिक घटनाएँ मौजूद हैं।

तीसरा अध्याय धर्माख्यान एवं चौथा कविता के संदर्भ में है। धर्माख्यान में लेखक ने मीरां के संदर्भ में कुछ विद्वानों के चले आ रहे मतों से असहमत होते हुए नये निष्कर्ष दिये हैं, जो निस्संदेह साहित्य के पाठकों के लिए नयी जानकारियों के साथ महत्त्वपूर्ण हैं। इतिहास और साहित्य के माध्यम से मीरां को जान पाने की जो सीमाएँ हैं वे यहाँ लंघ्य हो जाती है। मीरां को संपूर्ण रूप से जान लेने के लिए नाभादास का भक्तमाल, हित हरिराम की व्यासवाणी एवं राधावल्लभ संप्रदाय से संबंधित ध्रुवदास कृत भक्त नामावली बहुत कम जानकारी में रही हैं, अतः लेखक द्वारा जुटाये गए ये स्रोत मीरां-जीवन का वास्तव भी सामने लाते हैं। भक्तकाल के टीकाकार प्रियादास द्वारा मंड़ित मीरां की अतिरंजनाओं को भी लेखक ने अस्वीकार कर मीरां के असल चरित्र को बचाया है अन्यथा मीरां का स्त्री साहस पूर्णतः ज्ञेय नहीं हो पाता। माधव हाड़ा ने सही उल्लेख किया है कि "मीरां की भक्ति सामान्य लोक भक्ति थी, यह उसके लिए राजसत्ता और पितृसत्ता के विरुद्ध विद्रोह का एक ढंग था। मीरां की यही भक्ति और ढंग जनसाधारण में बहुत लोकप्रिय था।" परंतु यहाँ एक प्रश्न स्वाभाविक रूप से पाठक के सामने आता है कि मीरां भक्ति के माध्यम से क्रांति के रास्ते पर थी या क्रांति के माध्यम से भक्ति के रास्ते पर?

लेखक का यह मानना बहुत उचित लगता है कि उपनिवेशकाल इतिहासकारों ने मीरां की ऐसी छवि निर्मित की जो असल में नहीं थी। उन्होंने अपने यूरोपीय हितों के तहत स्त्री की मूल संघर्ष प्रवृत्ति का नुकसान पहुँचाते हुए उसमें केवल भक्ति, प्रेम और रोमांस को प्रधानता दे दी। इसलिए

यह मानने में संकोच नहीं रह जाता है कि इस 'बनायी गई मीरां' से असल मीरां दूर हो गई। क्योंकि यहाँ मीरां के प्रतिरोध को दरकिनार कर देना एक प्रकार की दुरभिसंधि थी। मीरां के प्रतिरोध को किनारे की प्रवृत्ति मान लेना एक भूल है। भारतीय समाज की गतिशीलता में मीरां का प्रतिरोध सिर्फ समाया हुआ नहीं है बल्कि सक्रिय है। इसे हम मीरां की कविता में अनिवार्य रूप से पाते हैं। किसी भी अन्य भ्रामक मत से पाठक को बचाने के लिए लेखक ने सप्रमाण इसका उल्लेख यहाँ किया है। मीरां की कविता में व्यवस्था के प्रति असंतोष और विद्रोह का उग्र स्वर उसे उसके समकालीन संत भक्तों से अलग करता है। इसीलिए लेखक की यह मान्यता है कि "कबीर व्यवस्था को चुनौती देते हैं, जब कि मीरां एक साक्षात और जीवित शत्रु से लोहा लेती दिखती है।" वास्तव में मीरां के समय की परिस्थितियाँ उसे साथ चलने के लिए अनुकुलताएँ नहीं देती हैं इसीलिए उस व्यवस्था से विद्रोही मीरां सामने आती है। किंतु उसके जागतिक स्त्री-संघर्ष का पूरा वर्णन नहीं मिलता - यह सप्रयास था। उपनिवेशकाल इतिहासकार यही चाहते थे कि मीरां ओढ़ाई की गई छवि से बाहर नहीं आ सके। कुछ सीमा तक वे इसमें सफल भी रहे।

पुस्तक का पाँचवाँ अध्याय कैननाइजेशन एवं छठा छवि निर्माण है। इसमें माधव हाड़ा ने स्पष्ट किया है कि जेम्स टॉड ने अपने सभी आग्रहों एवं पूर्वाग्रहों के चलते मीरां के संबंध में जो धारणायें तय कर दी थीं उससे एक संघर्षरत जागतिक स्त्री के नाते मीरां की छवि का नुकसान हुआ, परन्तु शायद अनचाहे ही कुछ लाभ मीरां को इस रूप में हुआ कि पारंपरिक इतिहास रूपों में बहिष्कृत मीरां को राज्याश्रय मे लिखे जाने वाले इतिहास में स्थान मिलने लगा। बाद में लोकप्रियता का उल्लेख कर्नल जेम्स टॉड ने भी किया जबकि मीरां के छवि-निर्माण मे यहाँ के सामन्तों के व्यवहार के साथ ही टॉड के व्यक्तिगत पूर्वाग्रह भी कारण थे। वह मीरां-संबंधी कुछ जानकारियाँ रखते हुए भी पराश्रित था। इसलिए वह अपने पूर्वाग्रहों के कारण मीरां के संबंध में धारणायें बनाता रहा। जब प्रामाणिक जानकारियों की बात सामने आती हैं तो मुंशी देवीप्रसाद के उस दावे को यहाँ लेखक खारिज करते हैं कि उनके पास कर्नल टॉड और भक्तमाल से अधिक सही सूचनाएँ थीं। इसमें लेखक का यह मानना है कि मुंशी देवीप्रसाद भी तथ्यों की अपेक्षा जन-श्रुतियों पर अधिक आश्रित थे और इससे मीरां संबंधी इनकी जानकारियाँ असंदिग्ध नहीं रह जाती है।

छवि-निर्माण के अन्तर्गत लेखक ने आजादी के बाद शिक्षा-प्रसार, मुद्रण-तकनीक और नये प्रचार माध्यमों से मीरां की बनती-बदलती छवि की सार्थक चर्चा की है। इसमें छोटी कक्षाओं में नैतिक शिक्षा के रूप में अनंत पै की अमर चित्रकथा शृंखला, नेशनल फिल्म आर्काइव, मीरांबाई (अंग्रेजी), श्री भक्ति वायसेस (स्ट्राटोन हावले) आदि की कृतियों के हवाले से मीरां की प्रचलित छवि की वास्तविकताओ से पाठकों को अवगत कराया है। इस संदर्भ में उनका यह मत एकदम सटीक है कि "मीरां का सन्त-भक्त रूप उसकी धार्मिक अस्मिता के आग्रह के अनुसार है जबकि उसकी निर्मित छवि का प्रेम, रोमांस, रहस्य और विद्रोह उसके नये उपभोक्ता रूप की जरूरतें पूरी कर रहा है।" वास्तव में मीरां की छवि का निर्माण उसके जीवन की आंशिक सचाई पर नहीं वरन् इतिहास संबद्ध घटनाओं की तोड़-मरोड़ पर आधृत हो गया था। परंतु इस पुस्तक के लेखक ने इतिहास की घटना-बहुलता एवं साहित्य में तथ्यात्मक साम्य का अध्ययन कर सार्थक निष्कर्ष दिये हैं, साथ ही

वे हनुमान प्रसाद पोद्धार द्वारा निर्मित मीरां छवि से पूर्णतः असहमत भी हैं तो उसका कारण भी बताते हैं कि उन्होंने मीरां के ऐतिहासिक मनुष्य स्त्री रूप की उपेक्षा कर आदर्श हिंदू पत्नी रूप में मीरां की छवि तैयार की है। इस छवि-निर्माण में पूर्ववत् नया कुछ भी नहीं है। समग्र रूप से माधव हाड़ा की यह पुस्तक मीरां-संबंधी भ्रामक जानकारियों, ऐतिहासिक तथ्यात्मक भूलों, इतिहासकारों की रुचि-अनुसार मीरां छवि निर्माण की वास्तविक स्थितियों से पाठकों को अवगत कराती हैं। साहित्य के एवं सामान्य पाठक मीरां को अब तक केवल सामंती अत्याचारों से पीड़ित नारी (पीड़ा-मुक्ति के लिए संघर्ष करती मीरां नहीं), कृष्ण की उपासिका, कम उम्र की विधवा एवं द्वारका में जल-समाधि - इससे अधिक जानकारी के जिज्ञासु नहीं रहे हैं। शायद पाठक भी इस तरह सतायी हुई मीरां के संबंध में अधिक और वास्तविक जानकारी के इच्छुक भी नहीं रहे होंगे। मीरां पर बहुत पठनीय कृतियां भी आई है लेकिन गढ़ी-गढ़ायी मीरां से वे भी आगे नही बढ़ती हैं, केवल ऐतिहासिक तथ्यात्मक सुधार अलग बात है, माधव हाड़ा की कृति का पाठक वर्ग इसलिए भी स्वागत करेगा कि जो स्रोत उन्होंने मीरां के असल चरित्र को सामने लाने के लिए एकत्र किये हैं वे इतिहास-संबंधी जानकारी से पूर्ण होकर मीरां-रचनाओं में प्रमाणित होते हैं। इस कृति का अतिरिक्त महत्त्व इस रूप में स्वीकार्य होगा कि माधव हाड़ा ने मीरां को 'चल निकली छवि' से बाहर लाने का सफल उद्यम किया है।